ETHICS OF CĀRVĀKA PHILOSOPHY
(चार्वाक दर्शन में प्रतिपादित आचारमीमांसा)

Renu Sharma

Abstract

The present paper aims at expounding the ethics of Cārvāka philosophy. Indian philosophy holds that all human pursuits or *puruṣārthas* tend to fulfil the four ends of life, namely *dharma*, *artha*, *kāma* and the *mokṣa*. Cārvāka philosophy is primarily materialistic and atheist philosophy. So this philosophy accepts only *kāma* and *artha* among the four human pursuits.

In the view of Cārvākas, fulfilment of desires or *kāma* should be the main objective of life furthermore to attain and accomplish all the desires *artha* can be considered as another *puruṣārtha*. According to the Cārvāka philosophy, happiness of present life is the main goal of human life. Cārvāka rejects the existence of god, soul, rebirth and *karmaphala* etc. This is the reason why Cārvāka is also called hedonistic philosophy.

In brief, the main purpose of the present paper is to highlight the ethics of Cārvāka philosophy in the light of above mentioned concepts.

Key words : Ācāra, Puruṣārtha, Dharma, Artha, Kāma, Mokṣa, Naitik mūlya, Sukh Bhautik, Sukhavādī etc.

पृष्ठभूमि

भारतीय दर्शन में मानव जीवन को सुचारू एवं नियोजित रूप से निर्वाह करने के लिए उसे चार प्रमुख भागों में विभाजित किया गया है। इन चारों के सम्मिलित रूप को पुरुषार्थ कहा गया है। ये पुरुषार्थ क्रमशः धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष हैं। ये चारों- नैतिक, आर्थिक, भावनात्मक तथा जीवन के अन्तिम लक्ष्य परमात्मप्राप्ति से सम्बन्धित

हैं। उक्त चारों ही पुरुषार्थ बौद्धिक, शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक लक्ष्यों की पूर्ति करते हुए व्यक्ति तथा समाज दोनों ही स्तरों पर प्रतिष्ठित हैं।

ध्यातव्य है कि भारतीय दर्शन में प्रारम्भ से ही नैतिकता विषयक तथ्यों का अध्ययन किया गया है, परन्तु विशेष स्मरणीय तथ्य यह है कि भारतीय दर्शन की नैतिकता से सम्बद्ध कोई पृथक् शाखा नहीं है, तथापि नैतिकता भारतीय दार्शनिक चिन्तन का अभिन्न अङ्ग रही है। चार्वाक दर्शन के अतिरिक्त समस्त भारतीय दर्शनों में जीवन के अन्तिम लक्ष्य परम पुरुषार्थ मोक्ष की प्राप्ति के लिए नैतिक आदर्शों का अनुपालन अनिवार्य रूप से स्वीकार स्वीकार किया गया है।

भूमिका

चार्वाक दर्शन मुख्य रूप से भौतिकवादी दर्शन के रूप में दृष्टिगत होता है। तदनुसार भूत ही मौलिक तत्त्वों के रूप में व्यवस्थित हैं। चार्वाक मत में महाभूत चार हैं- **अथातः तत्त्वं व्याख्यास्यामः**।[1]

तदनुसार प्रथम सूत्र में तत्त्वों की व्याख्या की गई है, क्योंकि चार्वाक दर्शनानुसार दुःखों की निवृत्ति के लिए तत्त्वों का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। इसी अभिप्राय से तत्त्वों की व्याख्या की जा रही है-

- **पृथिव्यापस्तेजोवायुरिति तत्त्वानि**।[2]
  अर्थात् तत्त्व सङ्ख्या में चार ही होते हैं - पृथिवी, जल, तेज, और वायु।
- **पृथिव्यादीनि भूतानि चत्वारि तत्त्वानि तेभ्य एव देहाकारपरिणतेभ्यः**।[3]
  अर्थात् पृथिवी आदि (पृथिवी, जल, तेज और वायु) भूत ही तत्त्वस्वरूप हैं। इसी भूतचतुष्टय से देह उत्पन्न होता है।
- **किं च पृथिवी जलं तेजो वायुर्भूतचतुष्टयम्।**
  चैतन्यभूमिरेतेषां मानं त्वक्षजमेव हि॥[4]
  अर्थात् पृथिवी, जल, अग्नि और वायु ये चार भूत ही चेतना की उत्पत्ति के कारण हैं। इनका प्रमाण तो प्रत्यक्ष ही है।

इन्हीं तत्त्वों के सायुज्य से युक्त शरीर, इन्द्रिय और विषय संज्ञा से अभिहित किया

गया है- **तत्समुदाये शरीरेन्द्रिय-विषयसञ्ज्ञा**।[5]

तथा इन्हीं चारों पदार्थों से मिलकर चैतन्य उत्पन्न होता है- **तेभ्यश्चैतन्यम्**।[6] अर्थात् इन्हीं चारों पदार्थों से चैतन्य उत्पन्न होता है।

चार्वाक दर्शन शरीर को ही चैतन्य मानता है। आत्मा की सत्ता का निषेध करते हुए कहा गया है कि यह चैतन्य से युक्त देह ही आत्मा है-

- **चैतन्यविशिष्टः कायः पुरुषः**।[7]
  अर्थात् चैतन्य से युक्त स्थूल शरीर ही आत्मा है।
- **चैतन्यविशिष्टदेह एवात्मा देहातिरिक्त आत्मनि प्रमाणाभावात्** ।[8]
  अर्थात् चैतन्य से विशिष्ट देह ही आत्मा है, देह के अतिरिक्त आत्मा के होने में कोई प्रमाण नहीं है।

उल्लेखनीय है कि चार्वाक मत में चैतन्य से युक्त भौतिक पिण्ड स्थूल शरीर ही आत्मा है। तथापि वे चैतन्य से युक्त शरीर को अनित्य ही मानते हैं-

जलबुद्बुद्वज्जीवाः।[9] अर्थात् जीव जल के बुद्बुद् (बुलबुले) के समान है।

इस प्रकार ज्ञात होता है कि चार्वाक मत में मात्र चार महाभूतों की सत्ता को स्वीकार किया गया है तथा चेतन शरीर ही आत्मा है। दृष्टि की सीमा पर्यन्त ही जगत् की भी सीमा है।[10] अर्थात् संसार मात्र उतना ही है जितना दिखाई देता है। सत्यता की कसौटी मात्र इन्द्रियाँ ही हैं। इन्द्रियों के माध्यम से प्राप्त ज्ञान ही वास्तविक है।

'आचार' पद का तात्पर्य

पुल्लिङ्ग पद 'आचार' आङ् +चर् + घञ् से निष्पन्न हुआ है, जिसका पर्याय रूप में शील, वृत्त, चरित, चारित्र आदि जाना जा सकता है।[11]

भारतीय संस्कृति में 'आचार' पद अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसका तात्पर्य यह है कि नियमन एवं संयमन से जीवनयापन करना। इसके अन्तर्गत वे नियम समाहित हैं, जो व्यक्ति के आचरण को परिनिष्ठित करते हुए जीवन को श्रेष्ठ मार्ग पर प्रशस्त करते हैं।

आचारशास्त्र, वह शास्त्र जिसके अन्तर्गत आचार से सम्बन्धित उक्त प्रकार के नियमों और मार्गों का विश्लेषण किया जाता है।

चार्वाक दर्शन की आचारमीमांसा

सुखवादी, देहात्मवादी चार्वाक दर्शन वेद-उपनिषदों, स्वर्ग-नर्क, आत्मा-परमात्मा, देव-दानव आदि के अस्तित्व का निराकरण करते हुए आचारमीमांसा का प्रतिपादन करता है। तदनुसार आचार की सीमा व्यक्ति तथा व्यक्तिगत इच्छाओं की परिधि में ही समाहित है। जीवन का एक मात्र उद्देश्य सुख की प्राप्ति है। व्यक्ति का इन्द्रियजन्य सुख ही मुख्य है। इस जगत् के परे कोई अन्य जगत् नहीं है। मृत्यु के पश्चात् पुनरागमन नहीं होता। इस बात की पुष्टि में चार्वाक स्पष्ट रूप से कहता है कि जब तक जीवन है, सुखपूर्वक जीना चाहिए, मृत्यु के बाद पुनरागमन नहीं होता इसलिए ऋण लेकर भी घृत पी लेना चाहिए-

यावज्जीवं सुखं जीवेन्नास्ति मृत्योरगोचरः।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः॥[12]

चार्वाक दर्शन की आचारमीमांसा विषयक तथ्यों का अध्ययन निम्नलिखित बिन्दुओं, तद्यथा– वेदों की प्रमाणिकता को स्वीकार न करना, पुरुषार्थ चतुष्टय में मात्र अर्थ एवं काम को मानना तथा कर्मफल का पूर्णतः निराकरण- इन बिन्दुओं के माध्यम से क्रमशः द्रष्टव्य है

वेदों का अप्रामाण्य

भारतीय दर्शन आस्तिक एवं नास्तिक- दो भागों में विभाजित है। तदनुसार भारतीय संस्कृति के मूल प्राण वेदों की प्रामाणिकता को स्वीकार करने वाले वर्ग को आस्तिक तथा वेदों के प्रामाण्य को न मानने वाले वर्ग को नास्तिक[13] कहा गया है। मधुसूदन सरस्वतीकृत *प्रस्थानभेदः* नामक ग्रन्थ में समस्त भारतीय दर्शनों का एवंविध वर्गीकरण प्राप्त होता है। ग्रन्थकार ने नास्तिकों के छह प्रस्थानों का उल्लेख किया है, जो क्रमशः इस प्रकार हैं- माध्यमिक, योगाचार, सौत्रान्तिक और वैभाषिक - ये चार बौद्ध प्रस्थान, चार्वाक तथा दिगम्बर।

तथा देहात्मवादेनैकं प्रस्थानं चार्वाकाणाम्। .....। एवं मिलित्वा नास्तिकानां षट् प्रस्थानानि।[14]

अर्थात् चार्वाक देह को ही आत्मा मानता है। इसलिए इनका देहात्मवाद प्रस्थान कहलाता है। इसको मिलाकर नास्तिकों के छह प्रस्थान हैं।

चार्वाक ने वेद का प्रमाण अस्वीकार करते हुए निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किये हैं-

- वेद धूर्तों के प्रलाप मात्र हैं। चार्वाक दर्शन में वेद को परमात्मा के निःश्वसित के रूप स्वीकार नहीं किया गया है, उनके अनुसार ये भण्ड, धूर्त तथा निशाचरों के बनाये हुए हैं तथा जर्भरी, तुर्फरी आदि निरर्थक पदों का प्रयोग लोकवञ्चना के लिए किया गया है-

  त्रयो वेदस्य कर्त्तारो भण्डधूर्तनिशाचराः।
  जर्भरीतुर्फरीत्यादि पण्डितानां वचः स्मृतम्।[15]

- अग्निहोत्रादि यज्ञानुष्ठान सम्बन्धित कृत्य मात्र धनप्राप्ति के कारण सम्पादित किये जाते हैं- **सर्वमर्थार्थं करोत्यग्निहोत्रसन्ध्याजपादीन्।**[16]

साथ ही एक अन्य स्थल पर भी उल्लेख प्राप्त होता है-

सर्वथा लौकायतिकमेव शास्त्रमर्थसाधनकाले।[17]

- वस्तुतः दुर्गुणों को छिपाने के उद्देश्य से वेद तथा शास्त्रों का पठन-पाठन किया जाता है- **स्वदोषं गूहितं कामार्त्तं वेदं पठति।**[18]

उक्त तर्कों से स्पष्ट है कि चार्वाकों की वेदवाक्यों के प्रति श्रद्धा नहीं है तथा वे वैदिक कर्मकाण्डों को स्वार्थसिद्धि के परिपोषक मानते हैं तथा धूर्तादि की रचनायें मानते हुए वेद का प्रामाण्य अस्वीकार करते हैं।

पुरुषार्थ चतुष्टय

भारतीय दार्शनिक चिन्तन के फलक पर नैतिकता के मार्ग पर चलने ले लिए चार पुरुषार्थों का प्रतिपादन किया गया है। ये पुरुषार्थ मानव की दुष्कर्मों से निवृत्ति तथा सत्कर्मों की ओर प्रवृत्ति की ओर अग्रसर करते हैं। ये पुरुषार्थ क्रमशः धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष के रूप में विश्रुत हैं। चतुर्विध पुरुषार्थ व्यक्तिगत तथा सामाजिक द्विविध स्तरों पर मानव का सर्वतोन्मुखी विकास करते हुए उत्कृष्ट जीवन की ओर अग्रसर करते हैं।

उल्लेखनीय है कि चार्वाक दर्शन में मात्र 'काम' को पुरुषार्थ के रूप में स्वीकार किया गया है तथा काम के उपकारक होने के कारण 'अर्थ' को सहायक पुरुषार्थस्वरूप माना गया है-

- **कामः एव एक पुरुषार्थः**।[19]
- **तदुपयोगित्वात् अर्थोपि अर्थकामौ पुरुषार्थौ**।[20]
  अर्थात् काम ही मुख्य पुरुषार्थ है और उसमें उपयोगी होने के कारण 'अर्थ' भी पुरुषार्थ माना जाता है। इसलिए चार्वाकों के मत में दो ही पुरुषार्थ है-अर्थ तथा काम।

वेद का प्रामाण्य स्वीकार न करके यह दर्शन स्पष्ट रूप से 'धर्म' नामक प्रथम पुरुषार्थ का निषेध करता है तथा अग्रिम दो पुरुषार्थों - 'अर्थ' और 'काम' को मानने के लिए निम्नलिखित तर्क प्राप्त होते हैं, तद्यथा-

- **सुखमेव पुरुषार्थः**[21] के अनुसार सुख ही पुरुषार्थ है। वह सुख आलिङ्गनादि से उत्पन्न होता है-

  अङ्गनालिङ्गनादिजन्यं सुखमेव पुरुषार्थः न चास्य दुःखसभिन्नतया पुरुषार्थत्वमेव नास्तीति मन्तव्यम्।[22]

- दुःखमिश्रित सुख भी चार्वाकों को स्वीकार्य है। अपने मत की पुष्टि हेतु दृष्टान्त देते हुए कहते हैं कि मछली पकड़ने वाला छिलके और काँटे सहित मछली को पकड़ता है और उपयुक्त अंश का ग्रहण करता है तथा शेष को छोड़ देता है। साथ ही मृग के डर से धान बोना भी नहीं छोड़ना चाहिए तथा याचकों के भय से पाकक्रिया का त्याग करना मूर्खतापूर्ण कार्य है-

  त्याज्यं सुखं विषयसङ्गमजन्म पुंसा
  दुःखोपसृष्टमिति मूर्खविचारणैषा।
  ब्रीहीञ्जिहासति सितोत्तमतण्डुलाढ्यान्
  को नाम भोस्तुषकणोपिहितान्हितार्थी॥[23]

- चार्वाक दर्शन के अनुसार केवल वर्तमान पर ही व्यक्ति का अधिकार है, इसलिए वर्तमान को सुखोपभोगपूर्वक व्यतीत करना चाहिए। तदनुसार अतीत पर तुम्हारा वश नहीं है, भविष्य पर विश्वास मत करो, पुरोदृश्यमान वर्तमान का भली-भाँति उपभोग करो। कल प्राप्त होने वाले मयूर की अपेक्षा आज उपलब्ध कपोत अधिक मूल्यवान् है-

  वरमद्य कपोतः श्वोमयूरात्।[24]

उक्त काम और अर्थ को ही प्रधान पुरुषार्थ मानते हुए चतुर्थ पुरुषार्थ मोक्ष की अवधारणा के विषय में चार्वाक का स्पष्ट मत है कि न स्वर्ग है और न ही मोक्ष है, न आत्मा और न ही कोई पारलौकिक फल ही है- **न स्वर्गो नापवर्गो वा नैषाऽऽत्मा पारलौकिकः**।[25]

- चार्वाक का मानना है कि शरीर भोगायतन है, शरीर की उपस्थिति तक ही कण्टकादि विषयक दुःख उत्पन्न होते हैं। शरीर के नष्ट होते ही समस्त दुःखों की निवृत्ति हो जाती है। मोक्ष अर्थात् मुक्ति मृत्यु का ही अपर नाम है। मृत्यु अर्थात् शरीर से मुक्ति होते ही समस्त दुःखों का नाश हो जाता है-

मरणमेव अपवर्गः।[26]

कर्मफल के सिद्धान्त का निराकरण

भौतिकवादी चार्वाक मत में चतुर्विध तत्त्वों से निर्मित देह को ही प्रत्यक्ष आत्मा माना गया है। केवल सुखमय जीवन व्यतीत करना ही, जीवन का एक मात्र लक्ष्य है। इस विषय में कतिपय उक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

- चार्वाक दर्शन प्रत्यक्ष प्रमाण को ही स्वीकार करता है। जबकि कर्मफल अदृष्ट है तो वे प्रत्यक्ष के अभाव में उस कर्मफल का अस्तित्व स्वीकार नहीं करते। यदि धर्मपूर्वक आचरण करें तो उसका फल प्रत्यक्ष में दृष्टिगत नहीं होता। शास्त्रनिर्दिष्ट कर्म तथा वर्णाश्रमादि क्रियायें भी उत्तरकाल में फलदायक नहीं हैं। अग्निहोत्रादि यज्ञ, ऋक्, यजुः, साम - ये तीन वेद, त्रिदण्ड (यज्ञोपवीत), शरीर में भस्मलेपन - ये सब केवल बुद्धि और पौरुषहीन धूर्तादि की जीविकामात्र हैं। जिन लोगों में बुद्धि अथवा किसी प्रकार की क्षमता नहीं है, वे लोग अग्निहोत्रादि यज्ञों द्वारा सब लोगों को ठगकर स्वार्थ साधन करते हैं। ब्रह्मा ने मूर्खों के लिए ऐसी जीविका का विधान किया है। पशुबलि के द्वारा ज्योतिष्टोमादि यज्ञ से स्वर्ग प्राप्त होता है तो याग करने वाला अपने पिता की यज्ञ में आहुति क्यों नहीं प्रदान करता, जिससे पिता अनयास ही स्वर्ग पहुँच जाये ! -

नैव वर्णाश्रमादीनां क्रियाश्च फलदायिकाः।
अग्निहोत्रं त्रयो वेदास्त्रिदण्डं भस्मगुण्ठनम्
बुद्धिपौरुषहीनानां जीविका धातुनिर्मिता
पशुश्चेन्निहतः स्वर्गं ज्योतिष्टोमे गमिष्यति।
स्वपिता यजमानेन तत्र कस्मान्न हिंस्यते।

- षड्दर्शनसमुच्चयकार ने लोकायतवादी अर्थात् चार्वाकों के विषय में स्पष्ट रूप से बताया है कि न तो देवता होते हैं और न मोक्ष। धर्म और अधर्म का अस्तित्व नहीं है और न पाप- तथा पुण्य का कोई फल होता है-

लोकयता वदन्त्येवं नास्ति देवो न निवृत्तिः।
धर्माधर्मौ न विद्येते न फलं पुण्यपापयोः॥[27]

- तीर्थयात्रा सदृश कर्म भी मात्र आडम्बर हैं, अग्निहोत्र तथा वेदपाठ आदि कर्म भी इसी कोटि के हैं। इनके अतिरिक्त शृंगार करना, द्यूतक्रीडा, मांसभक्षण तथा सुन्दर उद्यानों में विहार करना - आदि कार्य जीवन को सुखमय बनाते हैं-

चार्वाक दर्शन की आचारमीमांसा का अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि यह दर्शन कामनाओं की पूर्ति तथा धन के महत्त्व को स्वीकार करता है, परन्तु आध्यात्मिक एवं नैतिक स्तर पर धर्म तथा मोक्ष दो पुरुषार्थों का पूर्णतः निषेध करता है। ध्यातव्य है कि यद्यपि चार्वाक दर्शन वर्तमान में उपलब्ध व्यक्तिगत सुखवाद पर केन्द्रित है। वर्तमान के सुख पर चार्वाक दर्शन का केन्द्रीकरण अनुचित प्रतीत नहीं होता क्योंकि यदि वर्तमान सुखपूर्ण तथा विषादरहित होगा तो कहीं न कहीं वह समृद्धिकारक भविष्य का भी उत्पादक हो सकता है। यद्यपि चार्वाक का चिन्तन स्वार्थ से परिपूर्ण है तथापि यदि इस बिन्दु को सार्वभौमिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो सम्भवतः यह मानव के सुख का कारक हो सकता है।

सुखवादी चार्वाक दर्शन का एक मात्र ध्येय सुखों की प्राप्ति है। यह दर्शन व्यक्ति को केन्द्र के रूप में स्वीकार करता है तथा समाज का सिरे से विरोध करता है। अस्तु, चार्वाक का आचारशास्त्र मात्र सुखवाद को स्वीकार करता है, जो नास्तिक एवं समाजविरोधी है। जैसा कि डॉ. आई. सी. शर्मा के ग्रन्थ *Ethical Philosophies of India* में उल्लिखित है-

> "Cārvāka ethics advocates wealth and the emotional value of the satisfaction of desires, whereas negatively it rejects and repudiates moral and spiritual values of Dharma and Mokṣa respectively. The positive aspect of Carvāka ethics is undoubtedly a hedonism, and the negative aspect amounts to atheism and anti-socialism." [28]

अन्त्यटीका

---

[1] *तत्त्वोपप्लवसिंह*, जयराशिभट्टकृत, पृ.१

[2] वही

[3] *सर्वदर्शनसङ्ग्रह*, चार्वाक दर्शन,७, पृ.२

[4] *षड्दर्शनसमुच्चय*, हरिभद्रसूरिकृत, चावार्कमत, पृ.६७

[5] *तत्त्वोपप्लवसिंह*, जयराशिभट्टकृत, पृ.१

[6] उद्धृत, *चार्वाक दर्शन*, आनन्द झा, पृ.१२५

[7] उद्धृत, *चार्वाक दर्शन*, आनन्द झा, पृ.१२६

[8] *सर्वदर्शनसङ्ग्रह*, चार्वाक दर्शन, पृ.३

[9] उद्धृत, *चार्वाक दर्शन*, आनन्द झा, पृ.१२६

[10] *एतावानेव लोकोऽयं यावान् इन्द्रियगोचरः*। -*षड्दर्शनसमुच्चय*, हरिभद्रसूरिकृत, चावार्कमत, पृ.६४

[11] *शब्दकल्पद्रुमः*, राजा राधाकान्त देव, पृ. १६८

[12] *सर्वदर्शनसङ्ग्रह*, चार्वाक दर्शन, पृ.२

[13] मनुस्मृति के अनुसार वेद तथा शास्त्रों की निन्दा करने वाले को नास्तिक कहा है- **नास्तिको वेदनिन्दकः**।-*मनुस्मृति*, २.११

[14] *प्रस्थानभेदः*, मधुसूदनसरस्वतीकृत, पृ.३

[15] *सर्वदर्शनसङ्ग्रह*, चार्वाक दर्शन, पृ.११

[16] *बार्हस्पत्यसूत्रम्*, २.१७

[17] *बार्हस्पत्यसूत्रम्*, २.५

[18] *बार्हस्पत्यसूत्रम्*, २.१८

[19] उद्धृत, *चार्वाक दर्शन*, आनन्द झा, पृ.१३१

[20] उद्धृत, *चार्वाक दर्शन*, आनन्द झा, पृ.१३१

[21] *सर्वदर्शनसङ्ग्रह*, चार्वाक दर्शन, पृ.३-४

[22] *सर्वदर्शनसङ्ग्रह*, चार्वाक दर्शन, पृ.३

[23] *सर्वदर्शनसङ्ग्रह*, चार्वाक दर्शन, पृ.४

[24] *चार्वाक दर्शन की शास्त्रीय समीक्षा*, सर्वानन्द पाठक, पृ.४६ पर उद्धृत

[25] *सर्वदर्शनसङ्ग्रह*, चार्वाक दर्शन, पृ.४

[26] उद्धृत, *चार्वाक दर्शन*, आनन्द झा, पृ.१२७

[27] *षड्दर्शनसमुच्चय*, हरिभद्रसूरिकृत, चार्वाकमत, पृ.६३

[28] *Ethical Philosophies of India*, Sharma, I.C., p.109

सन्दर्भग्रन्थविवरणिका

प्राथमिक स्रोत

- *चार्वाक दर्शन की शास्त्रीय समीक्षा*, सर्वानन्द पाठक, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, वि.सं. २०२१
- *चार्वाक दर्शन*, आचार्य आनन्द झा, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, २०१३ चतुर्थ संस्करण
- *तत्त्वोपप्लवसिंह*, जयराशिभट्टकृत, बड़ौदा, ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट, १९४०
- *बार्हस्पत्यसूत्रम्* अर्थात् *बार्हस्पत्य अर्थशास्त्रम्*, बृहस्पतिकृत, मोतीलाल बनारसी दास, द पंजाब संस्कृत बुक डिपो, लाहौर, १९२१
- *मनुस्मृति* / मानवधर्मशास्त्र, पं. गिरिजा प्रसाद द्विवेदी (सं.), नवल किशोर विद्यालय, लखनऊ, १९१७
- *सर्वदर्शनसंग्रहः* श्रीमन्माध्वाचार्यप्रणीतः, आनन्दाश्रमसंस्कृतग्रन्थावलिः, आनन्दाश्रम ग्रन्थालय, पूना, १९०६
- *षड्दर्शनसमुच्चय*, हरिभद्रसूरिकृत, कामेश्वर नाथ मिश्र(सं.), चौखम्भा संस्कृत सीरीज़ ऑफिस, वाराणसी,१९७९

द्वितीयक स्रोत

- Chattopadhyaya, D.P., *Lokāyata A Study in Ancient Indian Materialism*, People's Publishing House, New Delhi, 1959
- Heera, Bhupender, *Uniqueness of Cārvāka Philosophy in Traditional Indian Thought*, Decent Books, New Delhi, 1976.
- Sharma, I.C., *Ethical Philosophies of India*, International Publishing, Ghaziabad (U.P.), 1991, 2nd edition.

कोशग्रन्थ

- *शब्दकल्पद्रुमः*, राजा राधाकान्त देव, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली, २००६ (तृतीय संस्करण)